11
जब सिनेमा ने बोलना सीखा

'वे सभी सजीव हैं, साँस ले रहे हैं, शत-प्रतिशत बोल रहे हैं, अठहत्तर मुर्दा इनसान जिंदा हो गए, उनको बोलते, बातें करते देखो।' देश की पहली सवाक् (बोलती) फिल्म 'आलम आरा' के पोस्टरों पर विज्ञापन की ये पंक्तियाँ लिखी हुई थीं। 14 मार्च 1931 की वह ऐतिहासिक तारीख भारतीय सिनेमा में बड़े बदलाव का दिन था। इसी दिन पहली बार भारत के सिनेमा ने बोलना सीखा था। हालाँकि वह दौर ऐसा था जब मूक सिनेमा लोकप्रियता के शिखर पर था। 'पहली बोलती फिल्म जिस साल प्रदर्शित हुई, उसी साल कई मूक फिल्में भी विभिन्न भाषाओं में बनीं। मगर बोलती फिल्मों का नया दौर शुरू हो गया था।

पहली बोलती फिल्म आलम आरा बनानेवाले फिल्मकार थे अर्देशिर एम.ईरानी। अर्देशिर ने 1929 में हॉलीवुड की एक बोलती फिल्म 'शो बोट' देखी और उनके मन में बोलती फिल्म बनाने की इच्छा जगी। पारसी रंगमंच के एक लोकप्रिय नाटक को आधार बनाकर उन्होंने अपनी फिल्म की पटकथा बनाई। इस नाटक के कई गाने ज्यों के त्यों फिल्म में ले लिए गए। एक इंटरव्यू में अर्देशिर ने उस वक्त कहा था–'हमारे पास कोई संवाद लेखक

© NCERT not to be republished

नहीं था, गीतकार नहीं था, संगीतकार नहीं था।' इन सबकी शुरुआत होनी थी। अर्देशिर ने फिल्म के गानों के लिए स्वयं की धुनें चुनीं। फिल्म के संगीत में महज तीन वाद्य–तबला, हारमोनियम और वायलिन का इस्तेमाल किया गया। आलम आरा में संगीतकार या गीतकार में स्वतंत्र रूप से किसी का नाम नहीं डाला गया। इस फिल्म में पहले पार्श्वगायक बने डब्लू. एम. खान। पहला गाना था–'दे दे खुदा के नाम पर प्यारे, अगर देने की ताकत है।'

आलम आरा का संगीत उस समय डिस्क फॉर्म में रिकार्ड नहीं किया जा सका, फिल्म की शूटिंग शुरू हुई तो साउंड के कारण ही इसकी शूटिंग रात में करनी पड़ती थी। मूक युग की अधिकतर फिल्मों को दिन के प्रकाश में शूट कर लिया जाता था, मगर आलम आरा की शूटिंग रात में होने के कारण इसमें कृत्रिम प्रकाश व्यवस्था करनी पड़ी। यहीं से प्रकाश प्रणाली बनी जो आगे फिल्म निर्माण का जरूरी हिस्सा बनी।

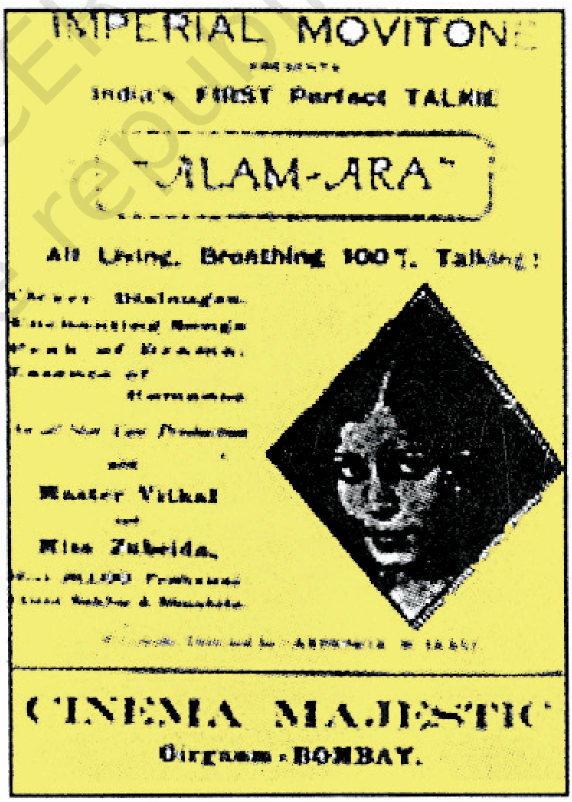

'आलम आरा' ने भविष्य के कई स्टार और तकनीशियन तो दिए ही, अर्देशिर की कंपनी तक ने भारतीय सिनेमा के लिए डेढ़ सौ से अधिक मूक और लगभग सौ सवाक् फिल्में बनाईं।

आलम आरा फिल्म 'अरेबियन नाइट्स' जैसी फैंटेसी थी। फिल्म ने हिंदी–उर्दू के मेलवाली 'हिंदुस्तानी' भाषा को लोकप्रिय बनाया। इसमें गीत, संगीत तथा नृत्य के अनोखे संयोजन थे। फिल्म की

© NCERT not to be republished

नायिका जुबैदा थीं। नायक थे विट्ठल। वे उस दौर के सर्वाधिक पारिश्रमिक पानेवाले स्टार थे। उनके चयन को लेकर भी एक किस्सा काफी चर्चित है। विट्ठल को उर्दू बोलने में मुश्किलें आती थीं। पहले उनका बतौर नायक चयन किया गया मगर इसी कमी के कारण उन्हें हटाकर उनकी जगह मेहबूब को नायक बना दिया गया। विट्ठल नाराज हो गए और अपना हक पाने के लिए उन्होंने मुकदमा कर दिया।

उस दौर में उनका मुकदमा मोहम्मद अली जिन्ना ने लड़ा जो तब के मशहूर वकील हुआ करते थे। विट्ठल मुकदमा जीते और भारत की पहली बोलती फिल्म के नायक बने। उनकी कामयाबी आगे भी जारी रही। मराठी और हिंदी फिल्मों में वे लंबे समय तक नायक और स्टंटमैन के रूप में सक्रिय रहे। इसके अलावा 'आलम आरा' में सोहराब मोदी, पृथ्वीराज कपूर, याकूब और जगदीश सेठी जैसे अभिनेता भी मौजूद रहे आगे चलकर जो फिल्मोद्योग के प्रमुख स्तंभ बने।

यह फिल्म 14 मार्च 1931 को मुंबई के 'मैजेस्टिक' सिनेमा में प्रदर्शित हुई। फिल्म 8 सप्ताह तक 'हाउसफुल' चली और भीड़ इतनी उमड़ती थी कि पुलिस के लिए नियंत्रण करना मुश्किल हो जाया करता था। समीक्षकों ने इसे 'भड़कीली फैंटेसी' फिल्म करार दिया था मगर दर्शकों के लिए यह फिल्म एक अनोखा अनुभव थी। यह फिल्म 10 हज़ार फुट लंबी थी और इसे चार महीनों की कड़ी मेहनत से तैयार किया गया था।

सवाक् फिल्मों के लिए पौराणिक कथाओं, पारसी रंगमंच के नाटकों, अरबी प्रेम-कथाओं को विषय के रूप में चुना गया। इनके अलावा कई सामाजिक विषयों वाली फिल्में भी बनीं। ऐसी ही एक फिल्म थी–'खुदा की शान।' इसमें एक किरदार महात्मा गांधी जैसा था। इसके कारण सवाक् सिनेमा को ब्रिटिश प्रशासकों की तीखी नज़र का सामना करना पड़ा।

सवाक् सिनेमा के नए दौर की शुरुआत करानेवाले निर्माता-निर्देशक अर्देशिर इतने विनम्र थे कि जब 1956 में 'आलम आरा' के प्रदर्शन के पच्चीस वर्ष पूरे होने पर उन्हें सम्मानित किया गया और उन्हें 'भारतीय सवाक् फिल्मों का पिता'

© NCERT not to be republished

कहा गया तो उन्होंने उस मौके पर कहा था, "मुझे इतना बड़ा खिताब देने की जरूरत नहीं है। मैंने तो देश के लिए अपने हिस्से का जरूरी योगदान दिया है।"

जब पहली बार सिनेमा ने बोलना सीख लिया, सिनेमा में काम करने के लिए पढ़े-लिखे अभिनेता-अभिनेत्रियों की जरूरत भी शुरू हुई क्योंकि अब संवाद भी बोलने थे, सिर्फ अभिनय से काम नहीं चलनेवाला था। मूक फिल्मों के दौर में तो पहलवान जैसे शरीरवाले, स्टंट करनेवाले और उछल-कूद करनेवाले अभिनेताओं से काम चल जाया करता था। अब उन्हें संवाद बोलना था और गायन की प्रतिभा की कद्र भी होने लगी थी। इसलिए 'आलम आरा' के बाद आरंभिक 'सवाक्' दौर की फिल्मों में कई 'गायक-अभिनेता' बड़े पर्दे पर नज़र आने लगे। हिंदी-उर्दू भाषाओं का महत्त्व बढ़ा। सिनेमा में देह और तकनीक की भाषा की जगह जन प्रचलित बोलचाल की भाषाओं का दाखिला हुआ। सिनेमा ज़्यादा देसी हुआ। एक तरह की नयी आज़ादी थी जिससे आगे चलकर हमारे दैनिक और सार्वजनिक जीवन का प्रतिबिंब फिल्मों में बेहतर होकर उभरने लगा।

अभिनेताओं-अभिनेत्रियों की लोकप्रियता का असर उस दौर के दर्शकों पर भी खूब पड़ रहा था। 'माधुरी' नाम की फिल्म में नायिका सुलोचना की हेयर स्टाइल उस दौर में औरतों में लोकप्रिय थी। औरतें अपनी केशसज्जा उसी तरह कर रही थीं। अर्देशिर ईरानी की फिल्मों में भारतीय के अलावा ईरानी कलाकारों ने भी अभिनय किया था। स्वयं 'आलम आरा' भारत के अलावा श्रीलंका, बर्मा और पश्चिम एशिया में पसंद की गई।

भारतीय सिनेमा के जनक फाल्के को 'सवाक्' सिनेमा के जनक अर्देशिर ईरानी की उपलब्धि को अपनाना ही था, क्योंकि वहाँ से सिनेमा का एक नया युग शुरू हो गया था।

–प्रदीप तिवारी

© NCERT not to be republished

प्रश्न-अभ्यास

पाठ से

1. जब पहली बोलती फिल्म प्रदर्शित हुई तो उसके पोस्टरों पर कौन-से वाक्य छापे गए? उस फिल्म में कितने चेहरे थे? स्पष्ट कीजिए।
2. पहला बोलता सिनेमा बनाने के लिए फिल्मकार अर्देशिर एम. ईरानी को प्रेरणा कहाँ से मिली? उन्होंने आलम आरा फिल्म के लिए आधार कहाँ से लिया? विचार व्यक्त कीजिए।
3. विट्ठल का चयन आलम आरा फिल्म के नायक के रूप हुआ लेकिन उन्हें हटाया क्यों गया? विट्ठल ने पुनः नायक होने के लिए क्या किया? विचार प्रकट कीजिए।
4. पहली सवाक् फिल्म के निर्माता-निदेशक अर्देशिर को जब सम्मानित किया गया तब सम्मानकर्ताओं ने उनके लिए क्या कहा था? अर्देशिर ने क्या कहा? और इस प्रसंग में लेखक ने क्या टिप्पणी की है? लिखिए।

पाठ से आगे

1. मूक सिनेमा में संवाद नहीं होते, उसमें दैहिक अभिनय की प्रधानता होती है। पर, जब सिनेमा बोलने लगा, उसमें अनेक परिवर्तन हुए। उन परिवर्तनों को अभिनेता, दर्शक और कुछ तकनीकी दृष्टि से पाठ का आधार लेकर खोजें, साथ ही अपनी कल्पना का भी सहयोग लें।
2. डब फिल्में किसे कहते हैं? कभी-कभी डब फिल्मों में अभिनेता के मुँह खोलने और आवाज़ में अंतर आ जाता है। इसका कारण क्या हो सकता है?

अनुमान और कल्पना

1. किसी मूक सिनेमा में बिना आवाज़ के ठहाकेदार हँसी कैसी दिखेगी? अभिनय करके अनुभव कीजिए।
2. मूक फिल्म देखने का एक उपाय यह है कि आप टेलीविजन की आवाज़ बंद करके फिल्म देखें। उसकी कहानी को समझने का प्रयास करें और अनुमान लगाएँ कि फिल्म में संवाद और दृश्य की हिस्सेदारी कितनी है?

© NCERT not to be republished

भाषा की बात

1. सवाक् शब्द वाक् के पहले 'स' लगाने से बना है। स उपसर्ग से कई शब्द बनते हैं। निम्नलिखित शब्दों के साथ 'स' का उपसर्ग की भाँति प्रयोग करके शब्द बनाएँ और शब्दार्थ में होनेवाले परिवर्तन को बताएँ। हित, परिवार, विनय, चित्र, बल, सम्मान।
2. उपसर्ग और प्रत्यय दोनों ही शब्दांश होते हैं। वाक्य में इनका अकेला प्रयोग नहीं होता। इन दोनों में अंतर केवल इतना होता है कि उपसर्ग किसी भी शब्द में पहले लगता है और प्रत्यय बाद में। हिंदी के सामान्य उपसर्ग इस प्रकार हैं–अ/अन, नि, दु, क/कु, स/सु, अध, बिन, औ आदि।

   पाठ में आए उपसर्ग और प्रत्यय युक्त शब्दों के कुछ उदाहरण नीचे दिए जा रहे हैं–

मूल शब्द	**उपसर्ग**	**प्रत्यय**	**शब्द**
वाक्	स	–	सवाक्
लोचन	सु	आ	सुलोचना
फिल्म	–	कार	फिल्मकार
कामयाब	–	ई	कामयाबी

   इस प्रकार के 15-15 उदाहरण खोजकर लिखिए और अपने सहपाठियों को दिखाइए।

© NCERT not to be republished

शब्दार्थ

सवाक् फिल्म	– मूक फिल्म के बाद बनी बोलती फिल्म	पार्श्वगायक	– पर्दे के पीछे से गाने वाला
पटकथा	– फिल्म के लिए लिखी जाने वाली कहानी	डिस्क फॉर्म	– रिकॉर्डिंग का एक रूप
		किरदार	– अभिनेता की भूमिका, चरित्र
संवाद	– फिल्म में की जाने वाली बातचीत	खिताब	– उपाधि, सम्मान

केवल पढ़ने के लिए

कंप्यूटर गाएगा गीत

© NCERT not to be republished

हिंदी फिल्मों में गीतों का आगमन आलम आरा (1931) से हुआ और तब से वे अब तक लोकप्रिय सिनेमा का अनिवार्य अंग बने हुए हैं। प्रारंभ में अभिनेताओं को अपने गीत खुद गाने पड़ते थे जो उसी समय रिकॉर्ड किए जाते थे। बाद में जब यह महसूस किया गया कि हर अभिनेता या अभिनेत्री अच्छा गायक भी हो यह जरूरी नहीं, तो पार्श्वगायन की प्रथा शुरू हुई और उससे गायन और भी परिष्कृत हुआ। इस बीच रिकॉर्डिंग की तकनीक में भी बहुत सुधार हुआ और उससे भी गायन की शैली में परिवर्तन हुआ। सिनेमा जैसे लोकप्रिय माध्यम में गीत के बोलों का महत्त्व ज़्यादा होता है। क्योंकि उन्हीं के माध्यम से किसी धुन का भावनात्मक प्रभाव पैदा होता है।

फिल्म संगीत का उद्गम इस सदी के प्रारंभिक वर्षों में शास्त्रीय संगीत के अलावा कव्वाली, भजन, कीर्तन तथा लोक-संगीत के वातावरण में हुआ। लोक-नाट्य तथा पेशेवर टूरिंग थिएटर कंपनियों का प्रभाव भी शुरू के फिल्मी गीतों पर था। चूँकि उन दिनों माइक्रोफोन तथा लाउडस्पीकर जैसी चीज़ें नहीं थीं, खुली हुई ऊँची स्पष्ट आवाज़ में गाना सबसे बड़ा और अनिवार्य गुण होता था। गायक को दूर-दूर तक बैठी भीड़ तक अपनी आवाज़ पहुँचानी होती थी। प्रारंभिक फिल्मों पर थिएटर का असर था, प्रारंभिक बोलती फिल्मों के लिए गायक भी थियेटर से आए। यह थिएटर

परंपरागत रूप से पुरुषों का था जिसमें महिला पात्रों की भूमिकाएँ भी पुरुष ही करते थे। लेकिन सिनेमा चूँकि कहीं अधिक यथार्थवादी माध्यम है, उसमें यह चीज़ नहीं चल सकती थी। अतः जो गायिकाएँ फिल्मों के लिए आईं वे स्वाभाविक ही भिन्न क्षेत्र की थीं। ये उस पेशेवर गायिकाओं के वर्ग से आईं जो महफिलों में और शादियों या सालगिरहों पर मुजरे पेश करती थीं।

इस शैली को फिल्म संगीत का पहला चरण कहा जा सकता है। ये गायिकाएँ जरा नाक में बैठी आवाज़ में गाती थीं। गीतों के बोल भी वे जरा बनावटी ढंग से चबाकर, अदा करती थीं। जल्दी ही गायिकाओं ने सुकून देनेवाली शैली में गाना शुरू कर दिया। नयी शैली का उदाहरण काननबाला का गाया 'जवाब बना गीत', 'दुनिया ये दुनिया तूफानमेल' था।

फिल्मी गायन के इस दूसरे दौर में ऐसी बहुत प्रतिभाएँ सामने आईं जिन्होंने अपनी आवाज़ को माइक्रोफोन के अनुकूल स्वाभाविक पिच (सूर) पर ढालने में सफलता पाई। शमशाद बेगम, सुरैया, नूरजहाँ तथा कुंदनलाल सहगल इनमें शामिल थे।

सहगल के साथ ही फिल्मी गायन का दूसरा दौर समाप्त हुआ। माइक्रोफोन के उपयुक्त नयी आवाज़ें आईं। मोहम्मद रफी, मुकेश, हेमंत कुमार, मन्नाडे, किशोर कुमार, तलत महमूद सभी मूलतः गायक थे। लता मंगेशकर के साथ गायिकाओं के क्षेत्र में नए युग की शुरूआत हुई। उनके कंठ की ताज़गी और आकर्षण ने गायकी के प्रतिमानों को ही बदल दिया। इनके अतिरिक्त आशा भोंसले, गीता दत्त, सुमन कल्याणपुरी आदि गायिकाओं ने अपनी खास शैली विकसित की।

भविष्य में क्या होगा? क्या हमारे लोकप्रिय सिनेमा पर गीत अब भी पहले की तरह हावी बने रहेंगे? क्या नित नए उपकरणों के आने के बाद आवाज़ के सुरीलेपन की जरूरत उतनी नहीं रह जाएगी? और किसे पता किसी दिन कंप्यूटर ऐसी आवाज़ बनाकर रख दे जो किसी भी मानवीय आवाज़ से ज़्यादा मुकम्मल हो!

–ऋत्विक घटक

© NCERT not to be republished